International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 3; May 2018; Page No. 29-30

मृणाल पाण्डे के साहित्य में भाग्यवाद का चित्रण

डॉ० ज्ञानी देवी गुप्ता
सहायक प्रोफेसर, गुरू काशी विश्वविद्यालय, तलवण्डी साबो, बठिण्डा, पंजाब, भारत।

प्रस्तावना

भारतीय सामाजिक सरंचना में भाग्यवाद की जड़े काफी गहरी और पुरानी है। भाग्यवाद को नियतिवाद भी कहा जाता हैं। यह नियतिवाद विचारधारा पीढ़ियों से इस देश की चेतना में धुंध बनकर छाई है। इसका परिणाम यह हुआ कि मानवीय जीवन आस्था को विकृत करने वाले तत्व सक्रिय रहे और विकृतियों से ग्रस्त मनुष्य आर्थिक कारणों को खोजने में असमर्थ रहा। श्रम में अनास्था का जन्म भाग्यवाद में आस्था को पुष्ट करता है, साथ ही उचित मूल्य के अभाव में श्रम से अविश्वास और परायापन भी हो जाता हैं भाग्यवाद भारतीय धर्म की प्रबल विसंगति है। यह मनुष्य को निष्क्रिय, प्रमादी और आलसी बना देती है।

मृणाल पाण्डे जी ने अपने साहित्य में भाग्वाद को महता दी है। 'रास्ते पर भटकते हुए' उपन्यास की पंक्तिया है ,''भाग्यहीनों की अटूट भाग्वादिता की कथाएं हम सबको चमत्कृत करती है। लेकिन निपट भाग्यहीन लोग अभी भी मानते हैं कि उनके सारे दुखों के मूल में भाग्य के कुछ अटल लेख है, उन्हें न डॉक्टर बदल सकते है और न ही पण्डे-पण्डित। भाग्य कह लो या नसीब या प्रारब्ध या कर्म। बात एक ही हैं और पूरी-जिन्दगियों की प्रिय और अप्रिय सच्चाईयों को समेटते हुए दूर तक जाती है।''[१]

अनेकों बार ऐसा होता है, जब भी कोई दुःखी होता हैं या किसी को अधिक दुःख मिलता हैं तो उसका भाग्य समझ लिया जाता हैं। इंसान सब कुछ भाग्य पर छोड देत हैं जो तर्कसंग नहीं है। ''उछाह से बहन के घर से मांगे उन तमाम धुले पर्दो कलैण्डरों तस्वीरों पर उसे रूलाई आने लगती – उसी के नसीबो हैगा ना। ये दूसरे की उतरन ओड़ने का संजोग। अरे रंग दबा था तो क्या ? पड़ोस की नीमा छमा की मां को अधरंग नहीं था, पर क्या उन्हें पीडब्ल्यू के ओवरसीयर नहीं मिल गये? बहन की छोटी बहू की रिश्तेदारी है। उस तरफ की। बता रही थी कि आज मायके आती हैं तो बक्से की तली में नोटों की गड्डी की तही ले के।''[२] 'हिन्दी मेयो का मंझला' कहानी में भी सब कुछ नसीब पर छोड़ दिया जाता हे कि जो नसीब में होता हैं वही मिलता हैं, ना उससे अधिक मिलता न उससे कम मिलता है।

''दरअसल नसीब में न, जो लिखा है सो होके ही रहता है। उसने झोला एक से दूसरे हाथ में बदल दिया और दुखती उंगलियों को भींचने लगा, ज्यों हवा से कुछ झपटता हो। उसने कुछ और भी कहा, पर वह एक भर्राहट में बिला गया। हवाई जहाज की गूंज नीली हवा की नीरवता में धुएं की लकीर सी हमारे सारों पर देर तक तिरती रही।

इसी भाग्वादिता ने तो इस शहर को मार डाला है, इसी से पुरूषार्थ, उद्यम, होटल कुछ नहीं पनप सका है। यहां इतने बरसों में। उधर पंजाबियों को देखो''[३]

'जो राम रचि रख' में भाग्यवाद का विरोध भी किया गया है कि मनुष्य कर्म से अपना भाग्य बदल सकता है, 'मैं करूंगा तर्क और मैं उठाऊंगा आपके इस अकर्मण्य भाग्यवाद के खिलाफ अपनी आवाज। देखूंगा आप मेरा क्या कर लेते है। मेरी ही गलती थी कि जो मेनें आपसे विरोध की अपेक्षा की, एक खतरनाक, लचीलेपन की नहीं। शक्ति की बुनियाद पर चोट करने की बजाए मुर्खताश उसके छोटे-छोटे कंगूरों पर ही वार करता रहा मै।''[४]

'दरम्यान' कहानी संग्रह में भी भाग्यवाद का वर्णन मिलता है। 'आततायी' कहानी में सब कुछ भाग्य के कारण माना जाता है। पंक्तिया है –''भाग्य हैं और क्या! एक उसांस लेकर अम्मा जी विक्रय पत्रिका से कहती है, कैसी-कैसी ऊंचे घराने की लड़कियां देख रही थी हमने इस नरेश के लिए। अरे तुम्हारे मामा जी की ही लड़की क्या कम थी। इकलौती लड़की थी, पांच-पांच कमाऊ भाई देने वाले? पर हमें क्या पता था कि वहां ये गुल खिल रहे है। अरे, जरा रीति-रिवाज से काम हो, जरा चार लोग मिलें-बैठे कुछ गाना बजाना ही, तो शोभा ही होता है।''[५]

इस प्रकार हम मानते हैं कि भाग्य कि हमारे जीवन में भाग्य की अहम भूमिका होती है। परन्तु सब भाग्य पर ही छोड़ देना यह बिल्कुल असंगत है। मनुष्य को कर्मशील बनना चाहिए तभी भाग्य पर सफलता की आस की जा सकीत ह ै। एक कथन भी है ''हम जरूरत से ज्यादा अतीतोन्मुखी और परम्परावादी हैं और यह उसी रूमानी दृष्टि की देन है। रूमानी दृष्टि अतीत का भी सरलीकरण करती है, उसकी जटिलताओं में नहीं जाती। हमारे कार्यकलाप ढ़ीलम ढ़ाल हमारे संस्थान पुराने दर्रे पर चलते रहना चाहते है। विशाल जनसमूह की दृष्टि भाग्यवादी है, इसलिए आज की चुनौतियों से दो चार हो पाने में हम अपने को असमर्थ पाते है।[६]

आज का युग वैज्ञानिक युग है, परन्तु फिर भी समाज में धार्मिक रीति-रिवाज, रूढ़िया प्रचलित है, जो धर्म का खोखला बनाते है। आज भी पण्डों, धार्मिक कर्मकाण्डों पर लोग विश्वास करते है। ''हिन्दुओं के धार्मिक बंधन बहुत शिथिल थे, लेकिन सामाजिक बंधन उतरे ही कठोर थे। एक हिंदू चाहे देवता की पूजा कर सकता था, चाहे जब स्नान कर सकता था, पूजा-पाठ, दान-पूण्य इत्यादि धार्मिक कृत्य के लिए कोई विशेष बंधन नहीं था, किन्तु विवाह, श्राद्ध, मुण्डन यज्ञोपवीत इत्यादि के करने में उसे रीति-रिवाजों एवं नियमों का अनुसरण करना आवश्यक था।''[७] डॉ. रामधारी सिंह 'दिनकर' भी धर्म के बारे में लिखते है, ''हिन्दू धर्म बहुत संकीर्ण हो चुका था।...धर्म के

नाम पर समाज में रूढ़िवादिता, बहुदेववाद, अंधविश्वाश आदि उत्कर्ष पर थे। सभी उपासकों का कर्तव्य अपने-अपने देवी-देवताओं की श्रेष्ठता सिद्ध करना था।''[८]

मृणाल पाण्डे जी ने अपने साहित्य में भी धर्म के खोखलेपन का वर्णन किया है। 'मुन्नूया की अजीब' कहानी में सभी जागरण, पूजा-पाठ करते है ''काली निस्तब्ध....रात....आग की लपटें,.......डिम डिम डिम...झन्ना-झन्ना...झन्ना झन्ना..। 'हयं हिवालू जाग। पयालू पाणी जाग'। जगरिया बाद्यों के बीच युग-युगों पर पुराना आह्वान एक बार फिर तिरने लगा। गूंजती आवाजें जा रही है घाटी के पार। पहाड़ों के पार। सात समन्दर। तेरह नदियों के पार। कलियुग पार कर द्वापर। त्रेतायुग चीरती हुई सतयुग के उस पार कालातीत देवताओं की देहरी तक।

जागों! जागों ही बाला वैजनाथ में। धौली-देव प्रियाग में। हरि हरिजन में। विश्वनाथ काशी में! जागे रे बूढ़ा केदार। भोले शंभुनाथ। काली कुयूं! चोपड़ा-चौथान! शोभन की गद्दी! स्फटिक का शिवलिंग! जाओ!जाओ!आओ! हे देवताओं! तुम शुभ घड़ी! सुमुहूर्त में आओ! आओ! आओ-आओ!

डिम डिम डिम! कच्ची उमर के बच्चे! नयी बहुएं सहम कर घर की बुढ़ियों से निपटने लगे है। परू के छोटे भाई सुरिया का पाजामा गीला हो गया है डर से...।

वहा.........प्रथम ओंकार! ओंकार से फोंकार! फोंकार से वायु! वायु से विषंदरी, विषंदरी से पाणी! पाणी से कमल! कमल से ब्रह्मा! ब्रह्मा से गुसाई जी प्रकट हो रहे है। गुसाई ध्यान धर रहे है....हाँ जल के सागर पर सृष्टि रची जा रही है रे वहां.........!वहां! डिम्म डिम्मा डिम........झन्ना... झन्ना........।''[९]

''मेरे विचार से ठोलिया रामनाथ बाजी और पुजारी जी को बुला लेते है कल! नहा-धो के सुमूहर्त में जागर लगाना ही अच्छा होगा। हरू चा ने राय दी। जागर लगाने की प्रसिद्धी इधर के ही लोगों की हुई दुक्षिण जोगी रंगा-चंगा। पूरब जोगी वादी। पश्चिम जोगी भोला भाला। सिद्ध जोगी उपराधी।''[१०]

'जो राम रचि राखा' में पाण्डे जी ने ऐसा ही वर्णन किया है - छोटी रानी अपने मायके के एक बाबा का वर्णन करती हुई कहती है, ''मेरे मायके में एक गारिया बाबा ऐसे ही पहुंचे हुए पीर फकीर थे। जिसे गाली दे दे तो उसका तो मानो जीवन ही कृतार्थ हो गया। जिसे कोढ़ी होने का शाप दें वो चंगा हो जाये, बांझ होने का शाप दे तो पूतों से आंगन भर जाए, दरिद्री होने की गाली दे तो, अटूट सम्पति मिल जाए। पीर और भगवान के असंख्य रूप होते है। लोग उनके पीछे पीछे भागते थे कि बाबा जी एक एक गाली दे दो।''[११]

मन्ना सेठ के साथ भी इसी प्रकार का व्यवहार किया जाता है, मन्ना सेठ कहता है, हां-हां मैं पागल ही सही। क्या मैं नहीं जानता कि आप मुझे सिरफिरा समझते है। मुझे रोकिए मत! कहने दीजिए। छिपा-छिपाकर वैद्य जी मेरे दूध में भस्में और चूर्ण मिलाते है, मेरे तकिये के सिरहीन गंडे और ताबीज दबाए जाते हैं, मेरे स्नान के पानी में जड़ी-बूटिया डाली जाती है।[१२]

'एक स्त्री का विदागीत' कहानी में भी धर्म का खोखलेपन का वर्णन मिलता है। ''किले की बगल में या गोरों का कब्रिस्तान, आरिश,स्काटिश, वेल्श नामों की लम्बी श्रृखंला, कहीं अलंकृत क्रेस, कहीं सिसकती परियों की संगमरमर मूर्तियों के साथ इन कब्रो पर कविताओं की पंक्तियों के बीच जड़ी रहती। कुछ नन्हीं कब्र उन पीलिया से हमारा चौकीदार कस्में खाकर बताता था, ''रात गए साहब लोगों, मेम लोगों के भूत वहां चौगान खेलते है बबू। गोरों के इलाके के भूत भी गोरे। शहर के पहाड़ी भूतों को तो भैरव पीठ 'कन्ट्रोल' में रखते है, इन पर किस का बस?''[१३] 'हमसफर' कहानी में भी अंधविश्वास की झलक मिलती है ''हवा में धूल और कोयले की बास थीं छिःछि कैसे पाप की बात सोचती है वह भी पितरों पुरखों के लिए पापिनी हे न जभी तो रंडाया झेल रही है वह। उसने चिरमिराती आंखे गदेली से पोंछी। हे भगवान!, उसके मन की यह अटपटी बातें माफ करना। मन पर किसको जोर? नहीं-नहीं होती होगी आत्मा। जरूर होती होगी। कहती न थी अम्मा की तारा बनकर आसमान में टिमटिमाती है। उसने अंधेरे आसमान को देखा। ठण्डा गुट्टिठल अंधकार। दूर बहुत दूर उगते सख्त दिल तारे। एक दसूरे से दूर, अपने अंधेरे में जलते हुए।''[१४] इस प्रकार धार्मिक अंधविश्वासों का वास्तविक रूप बिगड़ रहा है। पाखण्डियों, भ्रष्टाचारियों का बोलबाला है।

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि हमारे समाज में कई बार ऐसा भी होता हैं कि हम धर्म के पाखण्डियों के बहकावे में आकर एक ठीक इंसान को पागल बना देते है। कई बार तो इन अंधविश्वासों में पडकर जान त भी चली जाती है। जैसा पण्डे कहते हैं हम वैसा ही करते जाते है, जो तर्कसंगत नहीं है। बल्कि इससे एक दुःखी व्यक्ति और भी दुःखी हो जाता है। धार्मिक पाखण्डी लोग ऐसे लोगों से ही अपना स्वार्थ निकालते है। इन्हीं लोगों ने धर्म को खोखला बना दिया है।

सन्दर्भ

1. मृणाल पाण्डे, रास्तों पर भटकते हुए, पृ.२६
2. मृणाल पाण्डे, चार दिन की जवानी तेरी, पृ.३८
3. वहीं, पृ.५१
4. वही, रो राम रचि राखा, पृ.६७
5. मृणाल पाण्डे, दरम्यान, पृ.१७२
6. भीष्म साहनी पृ.२६५
7. डा. कृष्ण भावुक, पूर्व स्वतंत्रता कविता में राष्ट्रीय एकता, पृ.१५
8. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, पृ.२३८
9. मृणाल पाण्डे, चार दिन की जवानी तेरी, पृ.६७
10. वही,, पृ.६५
11. मृणाल पाण्डे, जो राम रचि राखा, पृ.७६
12. वहीं, पृ.६५
13. मृणाल पाण्डे, एक स्त्री का विदागीत, पृ.१६
14. वहीं, पृ.११०